प्रथम अध्याय

तप्तकाव्य : स्वरूप एवं वर्गीकरण

१- स्वरूप

सहृदय-हृदयाह्लादक तथा ब्रह्मानन्द-सहोदर-रसास्वाद प्रदाता काव्य के बहु-चर्चित विभिन्न अंगों में खण्डकाव्य का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण एवं अक्षुण्ण है । काव्य-भारती की यह महती विधा अपनी हृदयाकर्षक कथात्मकता, अपेक्षाकृत संक्षिप्तता, अनुपम रसात्मकता, नवनवोन्मेषशालिनी उक्ति एवं सर्वोपरि मनोज्ञ जीवनदर्शिता द्वारा आज भी मानवमात्र की हृत्तंत्रियों को झंकृत करके जन-मानस में प्रतिष्ठा पाती आ रही है । भारतीय तथा पाश्चात्य दृष्टि में काव्य की प्रस्तुत विलक्षण विधा का स्वरूप निर्धारण कैसे हुआ है, यह विचारणीय है ।

(क) संस्कृत काव्यशास्त्र के अनुसार

भारतीय मनीषी आचार्यों ने श्रव्यकाव्य के अन्तर्गत प्रबन्ध एवं मुक्तक -- दो भेदों को माना है, जिसमें प्रबन्धकाव्य के अन्तर्गत महाकाव्य तथा खण्डकाव्य का स्थान है । संस्कृत काव्यशास्त्र को परखने पर यह लक्षित होता है कि खण्डकाव्य शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग साहित्यदर्पणकार आचार्य विश्वनाथ ने किया है । यद्यपि प्रस्तुत लघुप्रबन्ध-काव्य रूप की परिकल्पना उनके पूर्व के आचार्यों ने भी की है । संस्कृत काव्यशास्त्र के प्रारंभिक पण्डितों ने प्रबन्ध-काव्य शब्द के स्थान पर सर्गबन्ध या सर्गबन्ध काव्य शब्द का ही अधिक प्रयोग किया है । उन्होंने प्रबन्ध के अन्तर्गत सर्गबन्ध काव्य के सिवा आख्यायिका, कथा जैसे प्रबन्धात्मक साहित्य रूपों को भी स्वीकार किया है। आलंकारिक भामह ने सर्गबन्ध काव्य का अतएव प्रमुख रूप से महाकाव्य ही स्वीकार किया है और खण्डकाव्य या लघु प्रबन्ध-काव्य की चर्चा आपने नहीं की है ।

आचार्य दण्डी ने अपने प्रख्यात काव्यशास्त्र के ग्रन्थ `काव्यादर्श` में `संघात-काव्य` नामक काव्यरूप की चर्चा की है और प्रस्तुत काव्य रूप के उदाहरण के तौर पर `मेघदूत` का नाम लिया है ।[१] बन्ध-सापेक्ष्य काव्य के लिए ही दण्डी का प्रस्तुत प्रयोग

१- यत्र कविरेकमर्थं वृत्तेनैकेन वर्णयति काव्ये ।
संघात: स निगदितो वृन्दावन मेघदूतादि: । - काव्यादर्श १,१३ में सूत्र की टीका प्रेमचन्द्र तर्कवागीशकृत ।

प्रयुक्त हुआ है । आचार्य रुद्रट ने प्रबन्धकाव्य के महत् तथा लघु-- दो रूप बताये हैं --

'सन्ति द्विधा प्रबन्धाः काव्यकथाख्यायिकादयः काव्ये ।

उत्पाद्यानुत्पाद्या महल्लघुत्वेन भूयोऽपि ॥[1]

कथा, आख्यायिका, प्रबन्ध काव्य जैसे समस्त प्रबन्ध का ही आपने ऐसा भेद किया है । उन्होंने महत् एवं लघु -- इन दो काव्यरूपों का अन्तर स्पष्ट करते हुए लिखा है --

'तत्र महान्तो येषु च विततेष्वभिधीयते चतुर्वर्गः सर्वे रसाः क्रियन्ते काव्य स्थानानि सर्वाणि । ते लघवो विज्ञेया येष्वन्यतमो भवेच्चतुर्वर्गात् असमग्रानेकरसा ये च समग्रैकरस-युक्ताः ।'[2]

यों तो सर्वप्रथम खण्डकाव्य की स्वरूप कल्पना आचार्य रुद्रट के उर्वर मस्तिष्क में आयी, जिन्होंने प्रबन्ध काव्य के महत् एवं लघु दो रूप निर्धारित किये ।

आनन्दवर्धन ने प्रबन्धकाव्य के लिए सर्गबन्ध काव्य का प्रयोग किया है । आपने कथा साहित्य का खण्डकथा, परिकथा, सकलकथा जैसा विभाजन किया है । लेकिन सर्गबन्ध काव्य के महत्,लघु रूपों का विवेचन आपने नहीं किया है ।

आचार्य हेमचन्द्र ने श्रव्यकाव्य के कथा, आख्यायिका, चम्पू, महाकाव्य आदि भेद माने हैं । लघु प्रबन्ध रूप की परिकल्पना संभवतः आपने भी नहीं की है। लेकिन आचार्य दण्डी की ही भाँति आपने भी 'मेघदूत' आदि का उदाहरण लेकर 'संघात काव्य' का उल्लेख किया है ।[3]

आचार्य विश्वनाथ द्वारा निर्धारित खण्डकाव्य की परिभाषा भारतीय काव्य-शास्त्र में 'खण्डकाव्य' की सर्वप्रथम परिभाषा है । आपने महाकाव्य के लक्षणों का उल्लेख

१-२. काव्यालंकार - (रुद्रट) ८,५,६.

३- "एक प्रघट्टके एक कविकृत सूक्तिसमुदायो — वृन्दावन मेघदूतादिः संघातः ।"

— काव्यानुशासन, ४,१२ में सूत्र की वृत्ति.

करने के उपरान्त खण्डकाव्य के बारे में यों बताया है --

"भाषा विभाषा नियमात्काव्यं सर्गसमुत्थितम् ।

एकार्थ प्रवणैः पद्यैः सन्धि सामग्र्यवर्जितम् ।

खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च ।"[1]

अर्थात् भाषा या उपभाषा में सर्गबद्ध तथा एककथा का निरूपण करने वाला पद्य ग्रन्थ, जिसमें समस्त सन्धियां न हों, काव्य कहा जाता है और काव्य के एक देश (अंश) का अनुसरण करने वाला खण्डकाव्य है ।

आपने फिर बताया है कि -- "लघु घटना प्राधान्यात् खण्डकाव्यमितिस्मृतम्,"[2] मतलब यह कि खण्डकाव्य वह है जो किसी घटना विशेष को लेकर रचा गया हो ।

समस्त संस्कृत काव्यशास्त्र पर एक सामान्य दृष्टि डालने पर यह स्पष्ट परिलक्षित हो जाता है कि संस्कृत काव्यशास्त्रियों ने महाकाव्य को अधिक महत्व देकर उसका ही सर्वांगपूर्ण विवेचन प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है । खण्डकाव्य उनकी दृष्टि में उपेक्षित या कम महत्व का रहा है । पर बस प्रबन्धकाव्य के लिए ही दण्डी ने संघातकाव्य नाम दिया है । मेघदूत जो दूतकाव्य है -- अवश्य प्रबन्धकाव्य है -- उसे ही आपने उदाहरण के तौर पर दिया है । यद्यपि अपनी तीव्र भावात्मकता के कारण मेघदूत को प्रगीतकाव्य मानने वाले भी हैं तथापि यह दूतकाव्य अपनी कथात्मकता एवं प्रबन्धत्व के कारण प्रबन्ध काव्य की कोटि को पहुंच जाता है । कविराज विश्वनाथ ने संघात काव्य को मुक्तक का ही एक उपभेद माना है । यह तो मुक्तकों के समूह -- अर्थ में ही होगा क्योंकि 'संघात' शब्द से 'समूह' का अर्थ भी ध्वनित होता है । लेकिन दण्डी का संघात काव्य विश्वनाथके 'संघात' से भिन्न है । दण्डी ने 'संघात-काव्य' शब्द का प्रयोग बन्ध निरपेक्ष या मुक्तक के लिए नहीं किया होगा, क्योंकि मेघदूत बन्ध-निरपेक्ष काव्य नहीं हो सकता । दण्डी ने प्रबन्धकाव्य के लिए 'संघात काव्य' का प्रयोग किया है । यही नहीं पहले से ही लक्ष्य

१- साहित्यदर्पण - परिच्छेद ६, पृ० ३२८-२९.

२- वही - पृ० ३२९.

काव्य के रूप में 'मेघदूत' अवश्य रहा । इस कारण इस के लिए संज्ञा अवश्य होनी चाहिए । इस अर्थ में तो इस निष्कर्ष पर पहुंचने को हम बाध्य होते हैं कि दण्डी प्रयुक्त 'संघात' रुद्रट द्वारा प्रयुक्त 'लघु काव्य' आदि नाम विश्वनाथ द्वारा उल्लिखित 'खण्डकाव्य' के ही पर्याय रूप में प्रचलित थे ।

(ख) हिन्दी काव्यशास्त्र के अनुसार

हिन्दी के विभिन्न विद्वानों ने भी खण्डकाव्य सम्बन्धी अपनी मान्यताएं व्यक्त की हैं --

"खण्डकाव्य वह प्रबन्धकाव्य है जिसमें किसी भी पुरुष के जीवन का कोई अंश ही वर्णित होता है, पूरी जीवन-गाथा नहीं । इसमें महाकाव्य के सभी अंग न रहकर एकाध अंग ही रहते हैं ।"[1]

"प्रबन्धकाव्य का दूसरा भेद खण्डकाव्य या खण्डप्रबन्ध है -- प्राय: जीवन की एक महत्त्वपूर्ण घटना या दृश्य का मार्मिक उद्घाटन होता है और अन्य प्रसंग संक्षेप में रहते हैं -- इसमें भी कथा-संगठन आवश्यक है, सर्गबद्धता नहीं । इसमें भी वस्तुवर्णन[2] भाव-वर्णन एवं चरित्र का चित्रण किया जाता है, पर कथा विस्तृत नहीं होती ।"

"खण्डकाव्य में एक ही घटना को मुख्यता दी जाकर उसमें जीवन के किसी एक पहलू की झांकी सी मिल जाती है"[3] ।

"महाकाव्य के ही ढंग पर जिस काव्य की रचना होती है पर जिसमें पूर्ण जीवन का ग्रहण न करके खण्डजीवन ही ग्रहण किया जाता है, उसे खण्डकाव्य कहते हैं ।" . . .. यह खण्डजीवन इस प्रकार व्यक्त किया जाता है कि जिससे वह प्रस्तुत रचना के रूप में स्वतः

१- हिन्दी काव्यशास्त्र का इतिहास - डा० भगीरथ मिश्र - पृ० ४२१.

२- काव्यशास्त्र - डा० भगीरथ मिश्र - पृ० ६१.

३- काव्य के रूप - गुलाबराय, पृ० २३.

पूर्ण प्रतीत हो ।[१]

जो काव्य की मात्रा में महाकाव्य से छोटा परन्तु गुणों में उससे कथमपि न्यून न हो खण्डकाव्य कहलाता है ।..... महाकाव्य विषय प्रधान होता है परन्तु खण्डकाव्य मुख्य विषयी प्रधान होता है जिसमें लेखक कथानक के स्थूल ढाँचे में अपने वैयक्तिक विचारों को प्रसंगानुसार वर्णन करता है ।[२]

काव्य के एक अंश का अनुसरण करने वाला खण्डकाव्य होता है । उसमें जीवन की पूर्णता अभिव्यक्त नहीं होती । उसकी रचना के लिए कोई एक घटना अथवा संवेदना मात्र पर्याप्त होती है ।[३]

स्पष्ट है कि हिन्दी के विद्वानों ने भी मौलिक रूप से खण्डकाव्य की परिभाषा बाँधने या स्वरूप निर्धारण करने का कष्ट नहीं किया है । वे केवल आचार्य विश्वनाथ की परिभाषा के व्याख्याता ही हुए । उपर्युक्त परिभाषायें उक्त बात के सुस्पष्ट प्रमाण उपस्थित करने वाली हैं ।

'हिन्दी काव्यशास्त्र के इतिहास' के लेखक डा० भगीरथ मिश्र ने खण्डकाव्य के स्वरूप को निर्धारित करने की सफल चेष्टा की है । उनके अनुसार खण्डकाव्य में पूरी जीवन-गाथा का गायन नहीं होता । किसी भी पुरुष के जीवन का कोई अंश वर्णित रहता है । खण्डकाव्य को महाकाव्य के सभी लक्षणों से युक्त होने की आवश्यकता भी उनके अनुसार नहीं, केवल एकाध लक्षण ही पर्याप्त है । 'किसी भी पुरुष से —' यह बात स्पष्ट ध्वनित होती है कि महाकाव्य के अनुसार उसके नायक को प्रख्यात आदि होने की आवश्यकता नहीं, कोई भी पुरुष अथवा मुख्य पात्र बन सकता है । 'काव्यशास्त्र' में

१- वाङ्मय विमर्श - आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ० ९६.

२- संस्कृत आलोचना - डॉ० - पी - बलदेव उपाध्याय.

३- हिन्दी साहित्य पर संस्कृत साहित्य का प्रभाव - डा० सरनामसिंह शर्मा, पृ० २८.

भी डाक्टर साहब कथावस्तु की एकांगिता पर ज़ोर देते हैं । कथा संगठन, वस्तुवर्णन, चरित्र-चित्रण आदि को आप आवश्यक मानते हैं । कथा की कम विस्तृति के भी आप पक्षपाती हैं । पर्याय रूप में खण्ड प्रबन्ध शब्द का भी आपने प्रयोग किया है । चाहे यह शब्द खण्डकाव्य के लिए उपयुक्त हो या नहीं -- इस शब्द का आगे प्रयोग नहीं के बराबर ही हुआ है ।

आचार्य विश्वनाथ की परिभाषा के ही अनुसार विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जी ने खण्डकाव्य के लक्षण बताये हैं । खण्डजीवन पर आधारित स्वतः पूर्ण जो रचना है, वही खण्डकाव्य है । आचार्य बलदेव उपाध्याय खण्डकाव्य को विषयी प्रधान मानते हैं, जबकि महाकाव्य को विषय-प्रधान । आपके इस कथन से हम पूर्णतः सहमत शायद ही हो सकेंगे । चूंकि खण्डकाव्य में भी कथात्मकता है, वह अधिकतर विषयप्रधान रहता है । आधुनिक कालीन प्रारंभिक खण्डकाव्य अधिकतर विषयप्रधान ही हैं । लेकिन आचार्य जी की यह बात आधुनिक काल के परवर्ती खण्डकाव्यों पर अधिक लागू है । इन खण्डकाव्यों में कथावस्तु की तुलना में भाव एवं वैयक्तिकता की प्रधानता अधिक रहती है । कभी-कभी क्षीण कथा-तंत्रियों पर वैयक्तिक भाव ही काव्य का ताना-बाना बनता है ।

इन्हीं के अनुरूप ही हिन्दी साहित्य कोश[१], साहित्य शास्त्र का पारिभाषिक शब्दकोश[२] आदि की भी परिभाषाएं हैं ।

१- " .... खण्डकाव्य एक ऐसा पद्यबद्ध कथाकाव्य है जिसके कथानक में इस प्रकार की अन्विति हो कि उसमें अप्रासंगिक कथाएं सामान्यतया अनुस्यूत न हो सकें, कथा में एकांगिता- साहित्य दर्पण के शब्दों में एकदेशीयता हो, तथा कथा-विन्यास क्रम में क्रम, आरंभ, विकास, चरमसीमा और निश्चित उद्देश्य में परिणति हो ।"

- हिन्दी साहित्य कोश - सं० डा० धीरेन्द्र वर्मा, पृ० २४८.

२ -" महाकाव्य के एक अंश का अनुसरण करने वाला काव्य महाकाव्य के लिए आवश्यक वस्तुओं में से, जिसमें सबका समावेश न हो और भी अपेक्षतया छोटे जीवन क्षेत्र का प्रबन्ध चित्र उपस्थित करे, वह खण्डकाव्य है ।

- साहित्यशास्त्र का पारिभाषिक शब्द कोश : राजेन्द्र द्विवेदी, पृ० ८०.

खण्डकाव्य की स्वरूप चर्चा के प्रसंग में डा० शकुन्तला दुबे ने बताया है --
"खंडकाव्य में प्रत्यक्षात्मवादी धारणाओं की अनुभूति की अभिव्यंजना है ।..... महाकाव्य संपूर्ण जीवन को व्याप्त करने वाला है, खण्डकाव्य उसके एक ही पक्ष को लेकर चलने वाला है ।[1]

समस्त: विचार करें तो खण्डकाव्य के निम्नलिखित कतिपय लक्षण सामान्यत: ठहरते हैं ।

(१) खण्डकाव्य महाकाव्य से आकार में छोटा होता है । अपने लघु रूप में भी उसकी अनुभूति की अभिव्यक्ति पूर्ण होती है ।

(२) कथासंगठन आवश्यक है । कथा-विन्यास में क्रम, आरम्भ, विकास, चरमसीमा और निश्चित उद्देश्य होना चाहिए ।

(३) खण्डकाव्य की कथावस्तु को ख्यात वृत्त, इतिहास-प्रसिद्ध अथवा पौराणिक होने की नितांत आवश्यकता नहीं है, कल्पना-प्रसूत कथावस्तु भी अभीष्ट है ।

(४) सर्गबद्धता अनिवार्य तो नहीं, हो तो भी ठीक है । सर्ग-संख्या परिमित रहे यह वांछनीय है ।

(५) कोई भी पुरुष उसका नायक बन सकता है ।

(६) उसमें व्यक्ति के जीवन की एक ही प्रमुख घटना का वर्णन होता है जो जीवन के किसी एक ही पक्ष को मानस प्रस्तुत करता है ।

(७) प्रासंगिक कथाओं का प्राय: अभाव रहता है ।

(८) खण्डकाव्य में महाकाव्य की भांति युग को कोई सन्देश नहीं दिया जाता है । पर उपदेश से वंचित भी वह कम रहता है । श्री मैथिलीशरण गुप्त का कथन है --

" केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए ।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए ॥"

(९) महाकाव्य की भांति खण्डकाव्य का भी चतुर्वर्ग फल में किसी एक की प्राप्ति उद्देश्य होता है ।

(१०) प्रमुखतया उसमें एक रस की प्रधानता रहती है । अंग रूप से अन्य रस भी हो सकते हैं ।

१- काव्यरूपों के मूलस्रोत और उनका विकास - डा० शकुन्तला दुबे, पृ० [illegible].

(११) सभी सन्धियों का होना उसके लिए अनिवार्य नहीं ।

(१२) मंगलाचरण, वस्तुनिर्देश आदि भी चाहें तो हो सकते हैं ।

(ब) पाश्चात्य काव्यशास्त्र के अनुसार

अब पाश्चात्य काव्यशास्त्र को भी परखकर देखें कि उसमें खण्डकाव्य का स्वरूप मिलता है अथवा नहीं, यदि है तो यह भी निरीक्षण करें कि काव्यविभाजन में पाश्चात्य काव्यशास्त्रियों ने प्रस्तुत काव्य रूप को कौन सा स्थान प्रदान किया है । प्राचीन यूनानी समीक्षा में सर्वप्रथम काव्य का सैद्धांतिक रूप से वर्गीकरण प्लेटो का ही उपलब्ध है । आपने काव्य के तीन मुख्य भेद माने हैं -- १- अनुकरणात्मक -- जिसके अन्तर्गत आपने नाट्य विधाओं को स्थान दिया । २- प्रकथनात्मक -- जिसमें कवि कथा का आख्यान करता है । ३- मिश्र -- जिसमें उपर्युक्त दोनों रूपों का सम्मिश्रण रहता है । यह रूप महाकाव्य एवं अन्य काव्यविधाओं में दृष्टिगोचर होता है ।

प्लेटो के शिष्य तथा सुप्रसिद्ध काव्यशास्त्री अरस्तू ने भी काव्य के विभिन्न भेद निर्धारित किये हैं । उसके लिए आपने विभिन्न आधारों को ग्रहण किया है । कवि का व्यक्तित्व, काव्य का विषय, काव्य का माध्यम, रीति आदि ही मुख्य आधार रहे हैं[१] । कवि के व्यक्तित्व के भी आपने दो प्रकार बताये हैं -- १- गंभीर चेता एवं उदात्त, २-क्षुद्र-विनोदी ।[२] इसी आधार पर यूनानी आचार्यों ने कवियों के दो वर्ग माने -- वीर कवि

१- महाकाव्य, त्रासदी, कामदी और डिथिरैम्ब तथा वंशी-वीणा संगीत के अधिकांश भेद अपने सामान्य रूप में अनुकरण के ही प्रकार हैं । फिर भी तीन बातों में वे एक दूसरे से भिन्न हैं : अनुकरण का माध्यम, विषय और विधि अथवा रीति प्रत्येक में पृथक् होती है । -- अरस्तू का काव्यशास्त्र -- ` Poetics ` का अनुवाद - डा० नगेन्द्र एंड महेन्द्र चतुर्वेदी, पृ० ६.

२- गंभीर चेता लेखकों ने उदात्त व्यापारों और सज्जनों के क्रिया-कलाप का अनुकरण किया । जो क्षुद्र वृत्ति के थे, उन्होंने अधम जनों के कार्यों का अनुकरण किया और जिस प्रकार प्रथम वर्ग के लेखकों ने देव-सूक्त और यशस्वी पुरुषों की सूक्तियां लिखीं उसी प्रकार इन लोगों ने पहले-पहल व्यंग्य काव्य की रचना की ।

-अरस्तू का काव्यशास्त्र - अनुवाद : डा० नगेन्द्र एंड महेन्द्र चतुर्वेदी, पृ० १४.

एवं व्यंग्य कवि । इनके काव्य क्रमशः कहलाये - वीर काव्य एवं व्यंग्य काव्य । काव्य-विषय मुख्यतः तीन प्रकार के थे -- यथार्थ से उत्कृष्ट, यथार्थवत् तथा यथार्थ से निकृष्ट । इस आधार पर काव्य के तीन भेद हुए -- १- यथार्थ से उत्कृष्ट मानव जीवन का चित्रण करने वाला काव्य, २- यथार्थ मानव जीवन का चित्रण करने वाला काव्य तथा ३- यथार्थ से निकृष्ट मानव जीवन का चित्रण करने वाला काव्य । "यह विभाजन मुख्यतः नैतिक आचरण पर आधारित है, अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि हमें या तो यथार्थ जीवन से श्रेष्ठतर रूप प्रस्तुत करना होगा या हीनतर या फिर यथार्थवत् ।"[१] विषय के आधार पर भी अरस्तु ने पाँच काव्य भेदों का उल्लेख किया है -- १- महाकाव्य, २- त्रासदी, ३- कामदी, ४- रौद्रस्तोत्र, ५- संगीत काव्य । महाकाव्य तथा त्रासदी में उदात्त विषय, कामदी में व्यंग्य व वक्रोक्ति, रौद्रस्तोत्र में रौद्र रस प्रधान नृत्य तथा मुक्त स्तवन तथा संगीत काव्य में कोमल भावनाओं की प्रमुखता रहती है । अनुकरण-रीति की दृष्टि से काव्य के दो भेद किये गये हैं -- समाख्यान काव्य एवं दृश्यकाव्य । माध्यम की दृष्टि से भी काव्य के दो भेद हैं -- पद्य काव्य तथा गद्य काव्य ।

यह तो स्पष्ट है कि अरस्तु के काल तक यूनान में इतने ही काव्य रूप विद्यमान थे । आपने अपनी प्रखर प्रतिभा के बल पर काव्य का जो वर्गीकरण प्रस्तुत किया है, वह भारतीय काव्यशास्त्रियों के काव्य विभाजन से बहुत-कुछ मेल खाने वाला है । अरस्तु के काव्य-विभाजन में श्रव्य एवं दृश्य तथा प्रबन्ध एवं मुक्तक का परोक्ष संकेत है । आपने महाकाव्य और नाटक के दोनों प्रमुख भेद -- त्रासदी और कामदी तथा देवस्तुति, संगीत काव्य और रौद्रस्तोत्र में मुक्तक एवं प्रगीत का संकेत किया है । मोटे तौर पर आपने काव्य के दो वर्ग किये हैं -- १- समाख्यान-काव्य, २- दृश्य काव्य । समाख्यान काव्यों में आख्यान की प्रमुखता रहती है तथा इसका प्रमुख भेद है महाकाव्य । महाकाव्य के अलावा क्षुद्र विषयों पर आश्रित व्यंग्य-उपहास-युक्त वक्रोक्ति काव्य भी इसके अन्तर्गत समाहित हैं । समाख्यान काव्यों

१- अरस्तु का काव्यशास्त्र-अनुवाद - डा० नगेन्द्र तथा महेन्द्र चतुर्वेदी, पृ० ६.

में महाकाव्य को प्रमुख स्थान देकर अरस्तू ने उसके काव्य रूप के विस्तृत विश्लेषण का ही अधिक प्रयास किया है । आपके अनुसार महाकाव्य जीवन की काव्यानुकृति है । एक ही छंद का प्रयोग इसमें होता है । कथानक, पात्र, विचार एवं भाषा -- ये चार ही इसके घटतत्व हैं । यूनानी काव्यशास्त्र के इन दो मनीषी आचार्यों -- प्लेटो तथा अरस्तू ने तथा उनके बाद वाले यूनानी काव्यशास्त्रियों ने महाकाव्य के अलावा उसके लघु रूप की चर्चा नहीं की है ।

यूरप के समीक्षकों ने भी काव्य-विभाजन का सफल प्रयास किया है । उन्होंने व्यक्ति व संसार को क्रम स्थान देकर काव्य के दो भेद किये हैं -- १. विषयीगत (subjective) जिसमें कवि की प्रधानता रहती है[1] और दूसरा विषयगत (objective) जिसमें कवि के अतिरिक्त संसार की प्रमुखता रहती है[2] । विषयीप्रधान काव्य को प्रगीत (Lyrics) कहा जाता है । विषयप्रधान काव्य एपिक (Epic) नाम से अभिहित किया जाता है । विषयप्रधान काव्य का पुनः विभाजन हुआ है -- Narrative (आख्यान काव्य) एवं Dramatic (रूपक काव्य) आख्यान काव्यों के अन्तर्गत महाकाव्य (Epic) का स्थान है । उसके भेदों में Epic of Growth (Primitive epic) (विकास काव्य) और Epic of art (Later epic) (कला काव्य) आ जाते हैं ।

---

1. There is the poetry in which the poet goes down in to himself and finds his inspiration and his subjects in his own experiences, thoughts and feelings. - An introduction to the study of literature - William Henry Hudson - Page: 96.
2. There is the poetry in which the poet goes out of himself, mingles with the action and passion of the world with out, and deals with what he discovers there with little reference to his own individuali The former class we may call personal or subjective poetry or the poetry of self-deli-neation and self expression. The latter we may call impersonal or objective poetry or the poetry of represent - ation or creation. - Same.

पाश्चात्य समीक्षकों ने खण्डकाव्य का एक अलग विभाग नहीं किया है । लेकिन ऐसे कुछ काव्य रूप हैं जो खण्डकाव्य के निकट माने जाते हैं ।

Epic of art या कलाकाव्य का एक लघु रूप मिलता है ---Mock epic --- माक एपिक । यह कथायुक्त, लघु कलेवर का काव्य है । इसमें किसी तुच्छ या क्षुद्र विषय को आधार बनाकर व्यंग्यपूर्ण शैली में काव्य निर्माण होता है ।[1] पोप का 'द रेप आफ द लोक' इस काव्य रूप का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है । यद्यपि इसका लघु रूप इसे खण्डकाव्य के निकट लाता है लेकिन इन दोनों में समता से अधिक विषमता ही है । माक एपिक में तुच्छ वस्तु या विषय को आधार बनाया जाता है । उसकी शैली व्यंग्यपूर्ण रहती है। खण्डकाव्य के लिए सदैव तुच्छ विषय का ग्रहण नहीं होता, उसी प्रकार वह व्यंग्यात्मक भी नहीं होता ।

पाश्चात्य काव्य रूपों में epic narrative (आख्यान काव्य) नामक काव्यरूप है जो भारतीय खण्डकाव्य के निकट आ जाता है । इस प्रकार के काव्य के लक्षण यों निरूपित हुआ है -- यह महाकाव्य के समान ही गरिमामय शैली से युक्त होता है, नायक के जीवन के एक ही महत्वपूर्ण घटना का वर्णन इसमें होता ह, इसकी विस्तृति परिमित रहती है और एक ही बैठक में यह पढ़ा जा सकता है ।[2]

---

1. A minor form of epic of art may just be mentioned - the Mock epic, in which the machinery and conventions of the regular epic are employed in connection with trivial themes and thus turned to the purposes of parody or burlesque............

   - An introduction to the study of literature - William Henry Hundson. Page: 108.

2. Epic narrative.......This term to denote poems in the dignified formal style associated with the epic, or in some other highly ornamented style, telling a story of heroic action or suffering, but with one simple action and without the length and complexity of the true epic...... but perhaps a convenient distinction may be that an epic narrative can be read at one sitting and an epic is not normally read all at once: - The Anatomy of poetry .

   - Marjorie Boulton. Page: 98-99.

किसी एक घटना को कथात्मक शैली में प्रबन्ध करना ही आख्यान काव्य का मुख्य लक्षण है। इस काव्य में किसी विचार के प्रतिपादन करने का आग्रह होता है। किसी कथाखण्ड को लेकर कम से कम पात्रों के द्वारा तथ्य-विशेष तक पहुँचना ही इसका प्रमुख उद्देश्य होता है। कथा के मार्मिक दृश्यों द्वारा ही कवि अपने विषय का प्रतिपादन करता है।"[1] आख्यानक काव्य महाकाव्य का एक अंश नहीं। "आख्यानक काव्य महाकाव्य का एक भाग नहीं माना जा सकता क्योंकि उसमें कथा की पूर्णता का अभाव रहता है जबकि आख्यानक काव्य खण्डकाव्य के समान सीमित क्षेत्र में भी पूर्ण होता है।"[2] कथावस्तु की एकांगिता, परिमाण्य काव्यशैली, लघुता आदि लक्षण इस काव्य रूप को खण्डकाव्य के निकट लाते हैं। " पाश्चात्य देशों में प्रबन्धों (Narratives) के दो रूप— महाकाव्य और कथाकाव्य (रोमांस) बहुत पहले ही मान लिये गये थे, किन्तु लघु प्रबन्ध काव्यों (खण्डकाव्य) को वहाँ भिन्न नाम दिया गया, उसे नैरेटिव पोयट्री (Narrative Poetry— प्रबन्ध काव्य) ही कहा जाता था, रोमांसिक कथाकाव्य (रोमांस) नहीं।"[3]

पाश्चात्य समीक्षा में नैरेटिव पोयट्री नाम काव्य के लघु रूप के लिए ही प्रयुक्त थे। अपने लघु कलेवर के भीतर भी नैरेटिव पोयट्री एक लघु आख्यान को समेट लेती है तथा प्रबन्धात्मक शैली का निर्वाह भी करती है। पाश्चात्य काव्य-क्षेत्रों में भारतीय लघु काव्य रूप-खण्डकाव्य के निकट आने वाले ये ही कतिपय काव्य रूप हैं।

२- खण्डकाव्य एवं कतिपय अन्य समान काव्यरूप

खण्डकाव्य एवं महाकाव्य

स्पष्ट है कि प्रबन्धकाव्य के क्षेत्रों में खण्डकाव्य का स्थान है। प्रबन्धत्व इस काव्य रूप की प्रमुख विशेषता है। प्रबन्धत्व गुण से युक्त दूसरा काव्यरूप है महाकाव्य।

१- प्रसाद का काव्य -- डा० प्रेमशंकर, पृ० ६४.

२- सियारामशरण गुप्त : व्यक्तित्व और कृतित्व - शिवप्रसाद मिश्र, पृ० १४६-१४७.

३- हिन्दी साहित्यकोश : भाग १, पृ० ५२२.

सामान्यतया जीवन के विस्तृत विश्लेषण से युक्त प्रबन्ध महाकाव्य और जीवन के सीमित या आंशिक विश्लेषण से युक्त काव्य खण्डकाव्य है । अक्सर आठ या आठ से अधिक सर्ग वाले प्रबन्धकाव्य महाकाव्य तथा आठ से कम सर्ग वाले प्रबन्धकाव्य खण्डकाव्य माने जाते हैं । लेकिन केवल सर्ग के आधार पर काव्य भेद का निर्धारण वैज्ञानिक एवं तर्कसंगत नहीं ठहरता । वही प्रबन्धकाव्य महाकाव्य कहलाने योग्य है जो महदुद्देश्य महत्चरित्र, समग्र जीवन चित्रण एवं गरिमामय उदात्त शैली से विभूषित हो । इन गुणों के न रहने पर आकृति में वृहत् होने पर भी वह काव्य महाकाव्य नहीं माना जायगा । इसका मतलब यह नहीं कि जो काव्य महाकाव्य की विशेषताओं से अभिमण्डित नहीं है वह खण्डकाव्य माना जाय । खंडकाव्य के अपने विशेष लक्षण होते हैं । खण्डकाव्य में जीवन का खण्डचित्र चित्रित होता है । कथा-वस्तु की लघुता एवं उद्देश्य की सीमाओं के कारण यह काव्यरूप महाकाव्य का वृहत् रूप पा नहीं सकता । यह जीवन का लघु चित्र प्रस्तुत करने वाला अपने आप में पूर्ण काव्यरूप है ।

एक में जीवन के विस्तृत एवं दूसरे में सीमित विश्लेषण से युक्त रहने के कारण पहला काव्यरूप (महाकाव्य) विशालकाय एवं दूसरा काव्यरूप (खण्डकाव्य) लघुकलेवर का रहता है । कलेवर के अन्तर के अतिरिक्त भी दोनों में कतिपय अन्तर होता है । कथावस्तु दोनों में ही मुख्यतया रहती है । महाकाव्य में कथावस्तु के विस्तृत विवरण का अवसर रहता है, वहाँ खण्डकाव्य में कथावस्तु संक्षेप में वर्णित होती है । खण्डकाव्य में जहाँ एक ही मार्मिक घटना के वर्णन की गुंजाइश रहती है वहाँ महाकाव्य में जीवन के कई मार्मिक प्रसंगों की मार्मिक एवं विशेष अवतारणा होती है । दोनों में ही प्रारंभ मंगलाचरण, वस्तुनिर्देश आदि के साथ होता है -- यह तो दोनों के लिए अनिवार्य नहीं -- काव्य का अंत भी कथा वर्णन के साथ-साथ धीरे-धीरे दोनों में हो जाता है । कथान्तर कथाएं जहाँ महाकाव्य में स्थान प्राप्त कर लेती हैं, खण्डकाव्य में उसके लिए कम अवसर ही मिलता है । उसी प्रकार चरित्र-चित्रण वातावरण आदि का चित्रण भी खण्डकाव्य में महाकाव्य की अपेक्षा परिमित रहता है । वस्तु के परिमित चित्रण के कारण अनुभूति विशृंखलित नहीं होती । यही नहीं, महाकाव्य जहाँ वर्णनात्मक अधिक रहता है, वहाँ खंडकाव्य अधिक अनु-भूतिपूर्ण होता है । बहुछंदात्मक न होकर प्रायः एकछन्दात्मक एवं बहुरसात्मक न होकर एकरसात्मक रहने के कारण महाकाव्य से अधिक रसाभिव्यक्ति एवं अनुभूतिप्रवणता एवं भाव की एकाग्रता खंडकाव्य में रहती है । अपने लघुरूप एवं भावप्रवणता के कारण यह काव्य रूप

अधिक लोकप्रिय भी बन गया है ।

खण्डकाव्य एवं एकार्थ काव्य

एकार्थ काव्य नामक काव्य रूप की चर्चा आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने की है[1] । एकार्थकाव्य प्रबन्धकाव्य का ही एक-एक भेद है । प्रबन्धकाव्यों के भेद निर्णय में एक सीमा तक आकार का प्रभाव रहता है । इस दृष्टि से यह महाकाव्य एवं खण्डकाव्य के बीच में आने वाला काव्यरूप है । विश्वनाथ प्रसाद मिश्र जी ने जिस एकार्थकाव्य की चर्चा की है उसकी परिकल्पना पहले आचार्य विश्वनाथ ने की थी । उनकी परिभाषा है "भाषा या विभाषा में, सर्गों से मुक्त, सन्धियों की समग्रता से रहित और एक ही अर्थ को लेकर रचित होने वाला पद्य काव्य है ।"[2] -- अंतिम लक्षण को मुख्य मानकर आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र ने इसे एकार्थकाव्य नाम दे दिया । "महाकाव्यों की ही पद्धति पर कुछ ऐसे प्रबन्ध काव्य भी बनते रहे हैं, जिनमें पाँच सन्धियों का विधान नहीं होता । तात्पर्य यह है कि उनमें पूर्ण जीवनवृत्त ग्रहण तो किया जाता है, पर उसका उतना अधिक विस्तार नहीं होता, जितना महाकाव्य में देखा जाता है । इसमें कथा का कोई उद्दिष्ट पक्ष प्रकट होता है ।"[3]

महाकाव्य में नायक का समग्र जीवन-चित्रण होता है । अतः इसमें अर्थ की विविधता रहती है । एकार्थकाव्य में नायक के जीवन के उतने ही अंश का ग्रहण होता है जितना किसी अर्थ विशेष की सिद्धि के लिए आवश्यक है । एकार्थात्मकता इस काव्यरूप की प्रमुख विशेषता है । एकार्थकाव्य एवं खण्डकाव्य का पार्थक्य यहीं पर है कि एकार्थ काव्य में व्यक्ति के समग्र जीवन का चित्रण एकार्थ सिद्धि को लक्ष्य बनाकर रहता है । खंडकाव्य में व्यक्ति के खंडजीवन का ही चित्रण होता है । एक सीमा तक एकार्थ काव्य खंडकाव्य की अपेक्षा महाकाव्य के अधिक समीप है । "वस्तुतः महाकाव्यात्मक उपन्यास (Epic Novel) सामान्य उपन्यास और कहानी में जो अन्तर है वही अंतर महाकाव्य, एकार्थकाव्य और खंडकाव्य में है ।"[4]

खण्डकाव्य एवं कथाकाव्य

खण्डकाव्य "कथाकाव्य" से भी भिन्न काव्यरूप होता है । इस प्रसंग में "कथा-

---

१- वाङ्मयविमर्श - आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र.
२- भाषा-विभाषा नियमात्काव्यं सर्गैरमुज्झितम् ।
एकार्थ प्रवणैः पंचभिः सन्धि समग्रयवर्जितम् ।" - साहित्यदर्पण- प०६, पृ० ३२८.
३- वाङ्मय विमर्श : पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र, पृ० ३९.
४- हिन्दी साहित्यकोश, पृ० २७३.

काव्य' के रूप विधान पर भी प्रकाश डालना है। संस्कृत काव्यशास्त्र में कथाकाव्य नाम से किसी अलग काव्यरूप का निर्धारण नहीं हुआ है। भारतीय परम्परा के अनुसार काव्य पद्यबद्ध, गद्यबद्ध एवं मिश्र तीन प्रकार के होते हैं और गद्य व पद्य दोनों में कथाप्रबन्ध होते हैं। पद्यात्मक प्रबन्ध सर्गबन्ध काव्य (महाकाव्य व खण्डकाव्य) कहा गया है और गद्यात्मक प्रबन्धों के कथा-आख्यायिका, परिकथा खण्डकथा आदि कई भेद माने गये हैं।[1] यों व्यापक दृष्टि से देखा जाय तो गद्यबद्ध एवं पद्यबद्ध सभी प्रबन्धों को कथाकाव्य या प्रबन्ध काव्य कहा जा सकता है। कुछ प्राचीन आचार्यों ने कथाकाव्य को श्रव्य प्रबन्धकाव्य के एक अंग के रूप में और प्रबन्धकाव्य (महाकाव्य व खण्डकाव्य) से भिन्न शैली का काव्यरूप माना था।[2] 'साहित्यकोश' के अनुसार "कथाकाव्य वह श्रव्य-प्रबन्ध है, जो एक और गंभीरता, महत् उद्देश्य और महच्चरित्र के अभाव में प्रबन्धकाव्यों से भिन्न हो गया है, दूसरी ओर रसात्मक और अलंकृत होने के कारण इतिवृत्तात्मक कथाओं से भी अपनी अलग सत्ता रखता है।"[3]

यह काव्यरूप खण्डकाव्य से रूप एवं भाव की दृष्टि से भिन्न है। कथाकाव्य की कथावस्तु कल्पना की अतिरंजिता से युक्त होती है, उसमें नाटकीय सन्धियों की अन्विति या सुसम्बद्धता नहीं रहती है। इस कारण कथाकाव्य की कथावस्तु शिथिल रहती है। खण्डकाव्य में कथावस्तु की सुदृढ़ संयोजना रहती है। कथाकाव्य का कोई महान् उद्देश्य नहीं रहता, मनोरंजन मात्र उसका लक्ष्य रहता है। इस दृष्टि से भी यह खण्डकाव्य के धरातल को स्पर्श नहीं करता। कथा के भीतर कथा कहने की प्रवृत्ति के कारण कथाकाव्य में कथान्तर कथाओं की प्रचुरता रहती है। खण्डकाव्य में ऐसा नहीं होता।

खण्डकाव्य एवं गद्यरूप

गद्य रूपों में जीवन के एक पक्ष के चित्रण की प्रमुखता से युक्त रूप हैं कहानी एवं एकांकी। जहाँ तक समग्र व्यक्ति जीवन के स्थान पर खण्ड जीवन का चित्रण होता है,

---

१- काव्यानुशासन - हेमचन्द्र, अध्याय ८
   ध्वन्यालोक टीका : अभिनवगुप्त, उद्योत ३, कारिका ७.
२- काव्यानुशासन - हेमचन्द्र : अध्याय ८,
३- हिन्दी साहित्यकोश : भाग १, पृ० २०२,

खण्डकाव्य की रूप से समता रखती है । उपन्यास तथा नाटक में जहाँ व्यक्ति का समग्र जीवन चित्रित होता है, वहाँ कहानी तथा एकांकी में जीवन के एक पक्ष का ही चित्रण मिलता है । यों तो उपन्यास व कहानी, नाटक व एकांकी में जो भेद है, वही महाकाव्य व खण्डकाव्य के बीच है ।

गद्य-पद्य का प्रमुख भेद तो इनमें रहता है । कहानी और एकांकी से खण्डकाव्य की दूसरी विषमता यह है कि प्रथम दोनों में कथा का आरम्भ होकर चरमसीमा में आकर उसकी समाप्ति हो जाती है । लेकिन खण्डकाव्य का वर्णन प्रारंभ होकर धीरे-धीरे विकसित होता है और क्रमशः उसका अंत भी हो जाता है । चरमसीमा पर खण्डकाव्य समाप्त नहीं होता । जीवन के किसी प्रभावशाली प्रसंग को लेकर कहानी एकांकी व खण्डकाव्य का निर्माण होता है । इस एक मूल साम्य को छोड़कर, तीनों के अपने-अपने अलग रूप हैं । एकांकी तो जीवन के एक प्रसंग का नाटकीय आविष्करण है । जिस कहानी में जीवन की एक ही घटना का आद्यंत विस्तार किया जाता है, उस कहानी के समान है खण्डकाव्य ।

खण्डकाव्य एवं मिश्रकाव्य

कतिपय मिश्र या मिश्रित काव्यरूप भी उपलब्ध हैं, जिनकी चर्चा भी यहाँ वांछनीय है । काव्य रूप तो अभिव्यक्ति के विभिन्न ढाँचे हैं । कवि की अनुभूति की अभिव्यक्ति की विभिन्न शैलियों के आधार पर ही विभिन्न काव्य रूप बने हैं । अनुभूतियों की अभिव्यक्ति कभी महाकाव्य के रूप में होती है, कभी वह खण्डकाव्य का ढाँचा अपना लेती है तथा कभी वह गीतिकाव्य या मुक्तक का रूप ग्रहण करती है । कुछ ऐसे ही काव्यरूप हैं जो एक से अधिक काव्यरूपों की विशेषताओं से समन्वित हैं । ऐसे ही काव्य मिश्र काव्य के रूप से जाने जाते हैं । काव्य की इस विधा में अन्यान्य भिन्न-भिन्न तत्वों के योग से निराला आकर्षण आ जाता है । एक ही साथ भिन्न-भिन्न अभिव्यंजना शैली का अनोखा रस भी पाठकों को प्राप्त होता है ।

प्रबन्ध काव्य तथा गीतिकाव्य सचमुच भिन्न-भिन्न काव्य रूप हैं । लेकिन आजकल के प्रबन्धों में जो गीति गुण विद्यमान हैं, महज उस कारण ऐसे काव्य मिश्र काव्य नहीं कहे जा सकते । मिश्र काव्य रूप वे हैं, जिन्हें हम स्पष्ट रूप से प्रबन्ध भी नहीं मान

सकते, गीति भी नहीं । किन काव्यरूपों में या तो किसी अन्य काव्यरूप का स्पष्ट मिश्रण है, अथवा जो गीतों के रूप में भी प्रबन्धात्मक लगते हैं या प्रबन्ध होकर भी मुक्तक से प्रतीत होते हैं, ऐसे ही काव्यरूप मिश्रित या मिश्र काव्य रूप हैं । इनमें भी एक काव्य-शैली यदि दूसरे के प्रभाव को दबाने में समर्थ होती है तो उस मुख्य काव्य शैली के अनुरूप उस काव्य रूप का नाम पड़ जाता है । उदाहरण के लिए कतिपय काव्यों में नाट्य शैली का भाविष्करण हुआ है । कुछ काव्यों में नाटक और गीतिकाव्य की शैली मिलकर एक हो जाती है । ये काव्य गीति नाट्य या गीति रूपक कहे जाते हैं । लेकिन ऐसे काव्य हैं जिनमें प्रबन्ध का भाविष्करण नाट्यीय शैली में होता है । ऐसे काव्य नाट्य प्रधान या रूपकप्रधान प्रबन्ध कहे जा सकते हैं । गीतिकाव्य में जब आख्यानयोजना का पुट अधिक रहता है अथवा आख्यान का आग्रह प्रबल रहता है, तब आख्यान की अभिव्यक्ति बन्ध सापेक्ष ही होती है और यह काव्य रूप गीतिकाव्य की सीमा को लांघकर प्रबन्ध काव्य की कोटि में पहुँच जाता है । जब नाट्य प्रधान आख्यान काव्य में जीवन के एक ही महत्वपूर्ण पक्ष का चित्रण प्रबन्धत्व का पालन करते हुए होता है तो वह रूपकप्रधान या नाट्यप्रधान खण्डकाव्य कहलाता है । गीतात्मकता तो प्रस्तुत काव्य रूप की चारुता में चार-चाँद लगा देती है ।

खण्डकाव्य एवं आख्यानक कविता

इनके अतिरिक्त ऐसी कुछ लम्बी कविताएं हैं जिनमें जीवन के किसी मार्मिक प्रसंग का बन्ध-सापेक्ष वर्णन होता है । ऐसी कविताएं आख्यानयुक्त लम्बी कविताएं मानी जाती हैं । यहां यह महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या ये लम्बी कविताएं खण्ड-काव्य मानने योग्य हैं ? इन कविताओं में खण्डकाव्य के लक्षण का पालन मात्र इतना रहता है कि उसमें जीवन के एक पक्ष का उद्घाटन बन्धयुक्त शैली में होता है । लेकिन क्या की बन्धयुक्त योजना मात्र से कोई कविता खण्डकाव्य का महत्व प्राप्त नहीं कर सकती । ऐसी कवितायें आख्यानक कवितायें ही रह जाती हैं । खण्डकाव्य की अपनी निजी काव्य शैली

है जो गरिमामयी है, (चाहे महाकाव्य की भाँति उतनी गरिमामयी न हो) खण्डकाव्य के लिए जो अन्य तत्व अपेक्षित हैं, उनका नितांत अभाव रहता है । आख्यानक कविता के लघु कलेवर में पात्रों के चरित्र-चित्रण, रसयोजना, काव्य का आदि, मध्य, अंत आदि का सुरम्य चित्रण आदि के लिए आवश्यक अवकाश नहीं । इस अवस्था में ये कविताएँ खण्डकाव्य के पद की अधिकारी कम ही हैं ।

परन्तु ऐसी कुछ कविताएँ हैं जिनकी उपेक्षा करना उनके प्रति अन्याय हो जाता है । ये कविताएँ केवल आकार में ही लघु रहती हैं, पर अपने वस्तु कथन, चरित्र चित्रण रस परिपाक, जीवन के एकांकी चित्रण तथा गरिमामय शैली से युक्त रहती हैं । अंग्रेजी में ये ही कविताएं narrative Poems मानी जाती हैं --महान् कवि वर्ड्सवर्थ की कविताएं ऐसी ही हैं --ये हिन्दी के खण्डकाव्यों के समरूप माने जाती हैं । हिन्दी में ऐसी कतिपय कविताएं हैं जो खण्डकाव्य के महत्व को प्राप्त करने योग्य हैं । आधुनिक कवि सूर्यकांत त्रिपाठी निराला कृत `राम की शक्तिपूजा` इसका अच्छा उदाहरण है ।

खण्डकाव्य एवं गीतिकाव्य

पश्चिमी काव्यशास्त्र में काव्य का विभाजन करते हुए जिस अन्तर्वृत्ति-निरूपक अथवा स्वानुभूति-निरूपक काव्य का एक और संकेत हुआ है, उसी के अन्तर्गत अंग्रेजी के `लिरिक` का स्थान है जिसे हिन्दी में `गीतिकाव्य` नाम मिला है । आत्माभिव्यंजना, संगीतात्मकता, अनुभूति की पूर्णता, भावों का ऐक्य आदि इस काव्य विधा की विशेषताएँ हैं । गीतिकाव्य के कई भेद हैं जिनका प्रयोग हिन्दी काव्य में भी खूब हुआ है । प्रोफेसर ग्यूमर ने गीतिकाव्य को मानव भावनाओं को स्पर्श करने वाली एक अनुपम अभिव्यक्ति कहा है और उसके कार्य को वही बताया है जिसकी विवेचना अरस्तु ने katharsis (कथारसिस`) प्रक्षालन या विरेचन शब्द द्वारा की है । उनके अनुसार गीतिकाव्य मानव-भावनाओं को उद्दीप्त कर

उन्हें पुनीत करता है ।[1] इसी धारणा के अनुसार आपने गीतिकाव्य का विभाजन सात प्रकारों में किया है -- (१) धार्मिक गीत जिसके अन्तर्गत स्तुतिपरक गीत (Hymn), संबोध गीत (ode), भावात्मक धर्म गीत (Reflective Sacred lyric) आदि का स्थान है । (२) देशभक्ति के गीत, जिसमें राष्ट्रीय भावना से पूर्ण गीत तथा युद्ध के गीत आते हैं । (३) प्रेम-गीत । (४) प्रकृति के गीत । (५) दुःखद गीत (Elegy) । (६) विचारात्मक गीत, तथा (७) उत्सव (convivial) गीत । इन सात प्रकार के गीतों के अतिरिक्त उन्होंने गीतिकाव्य के 'अन्य प्रकार' के अन्तर्गत लिरिकल-बैलेड (lyrical ballad), सॉनेट (Sonnet) और एपीग्राम (Epigram) को भी लिया है ।

डाक्टर आर०एम०एल्डन ने गीतिकाव्य का विभाजन बाह्य स्वरूप के आधार पर किया है ।[2] वस्तुतः या अन्तरंग के आधार पर भी आपने विभाजन किया है । यों पाश्चात्य विद्वानों द्वारा गीतिकाव्य के विभिन्न भेद निर्धारित हुए हैं -- सॉनेट (Sonnet), ओड (ode), एलिजी, (Elegy), सांग (Song), एपिसिल (Epistle), ईडिल (Edyll) और वर्स डी सोसाइटी (verse-de-Societe) ।

आन्तरिक रूप में गीतिकाव्यों के विभाजन में सुन्दरतम रूप प्रेमप्रधान गीतों का है । एलिजाबेथ युग में अंग्रेजी साहित्य में प्रेमप्रधान गीतिकाव्य खूब विरचित हुए । फिर रोमान्टिक रिवाइवल (romantic revival) के समय तो इन प्रणय गीतों का

---

1. The lyric comes from and appeals to the feelings. It stirs our emotions and purifies them - a process to which in the case of the drama Aristotle applied the term Katharsis - a purfing or purging. (Lyric poetry must therefore be devided according to the nature of feelings aronsed - Hand book of poetics - By F.B. Gummere. Chapt. II, Page. 42.

2. Another method is to group them according to metrical forms - An introduction to poetry: R.M. Alden, Page: 61.

प्राधान्य हो गया । वर्ड्सवर्थ, शैली, कीट्स आदि प्रसिद्ध कवियों के प्रेमप्रधान गीतिकाव्य उत्कृष्ट कहे जाते हैं ।

हिन्दी काव्यक्षेत्र में प्रेम प्रधान गीतिकाव्य की परम्परा विद्यापति से प्रारंभ होकर अबाध चलती ही रही है । छायावाद युग में आकर गीतिकाव्य का प्रचुर प्रचार हुआ । प्रसाद, पंत, निराला, महादेवी सभी ने प्रेम प्रधान गीतों की रचना की । प्रसाद की `लहर` पन्त का `पल्लव` निराला का `परिमल` महादेवी का `सान्ध्यगीत` आदि प्रेम प्रधान गीतिकाव्य के सुन्दर संग्रह हैं ।

देशप्रेम सम्बन्धी तथा युद्ध-सम्बन्धी भी गीतिसंग्रह मिलते हैं । अंग्रेजी में टेनिसन, बायरन आदि ने ऐसे गीत रचे । (हिन्दी के वीर युग में जिन वीररस-प्रधान काव्यों का निर्माण हुआ, वह गीतिकाव्यों की श्रेणी में आने वाला नहीं है । अंग्रेजी में ये बैलेड (ballad) कहे जाते हैं और हिन्दी में ये वीर भावात्मक प्रबन्धकाव्यों के अन्तर्गत समाहित होते हैं ।) प्रसाद का "हिमाद्रि तुंग शृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती" -- वाला गीत ऐसे गीतों का उत्कृष्ट उदाहरण है ।

हिम्[१] (Hymn) तो भक्तिप्रधान गीतिकाव्य है जिसमें पवित्र भावनाओं का चित्रण होता है । प्रसाद, पन्त, निराला के दार्शनिक गीत इसी भक्तिपरक गीतिकाव्य की श्रेणी में आते हैं ।

विचारात्मक गीतिकाव्यों में मस्तिष्क की प्रधानता रहती है । उनमें उच्च विचारों एवं बौद्धिकता का आग्रह रहता है । गीतिकाव्य के वस्तुगत वर्गीकरण के जो सम्बोधगीति, शोकगीति, सॉनेट आदि भेद हैं वे बहुत कुछ विचार-प्रधान गीतों की कोटि

१- उच्चारण हिन्दी शब्द कोश (डा० धीरेन्द्र वर्मा) के अनुसार.

में आने वाले हैं । अंग्रेजी में कीट्स, वर्ड्सवर्थ आदि के गीत और चतुर्दशपदियां इसी कोटि की है । प्रसाद के 'आंसू' में यही विचारात्मकता कूट-कूट कर भरी है और महादेवी वर्मा की 'दीपशिखा' विचारात्मक गीतों का सफल संग्रह है ।

पाश्चात्य साहित्य में Satirical lyric (व्यंग्य गीति) का भी प्रमुख स्थान है । इसमें बुद्धिपरक वैदग्ध्य खूब रहता है । व्यंग्यगीति के कई भेद हैं, जिनमें पैरोडी (Parody) का सर्वाधिक महत्व है । छायावादी कवि पंत और निराला के 'ग्राम्या' और 'कुकुरमुत्ता' में व्यंग्य का परिचय मिलता है । तुलसीदास की 'विनय-पत्रिका' की पैरोडी बच्चन ने 'प्रणयपत्रिका' में प्रस्तुत की ।

गीतिकाव्य का जो बहिरंग-वर्गीकरण होता है उसमें सॉनेट[१] या चतुर्दशपदी का सर्वाधिक महत्व है । गीतिकाव्य के विविध रूपों में सबसे लघु रूप इसका है । इसमें चौदह पंक्तियों में कवि अपने विचारों का आविष्करण करता है । कवि को आद्यंत एक ही भाव एवं विचार को भिन्न लयों में अन्विति(unity) के साथ आविष्करण करने में सजग रहना पड़ता है ।

सॉनेट में पहले प्रेम ही मुख्य विषय रहा । एलिज़ाबेथ-युग के सिडनी, स्पेन्सर और शेक्सपीयर ने प्रेम को ही विषय बनाकर सॉनेट रचे । आगे चलकर मिल्टन तथा वर्ड्स-वर्थ ने सॉनेट में विषयगत विभिन्नता लाकर अपनी अनूठी मौलिकता दिखायी ।

अंग्रेजी का यह काव्य रूप हिन्दी में 'चतुर्दशपदी' कहलाता है, इसकी रचना हिन्दी के आधुनिक काल में ही हुई है । पं० श्रीधर पाठक ने पहले पहल अंग्रेजी के अनेक सॉनेटों का हिन्दी में स्वतन्त्र अनुवाद किया । प्रसाद ने भी अनगिनत चतुर्दशपदियां लिखीं ।

---

1. Sonnet - ital. Sonetto.

(Encyclopedia Brittanica, Vol. XXV Page. 394.

ओड (ode) सम्बोध गीति

"ओड वह तुकांत (कहीं-कहीं अतुकान्त भी) गीतिकाव्य है जो सम्बोधन के रूप में होता है और साधारणतः उसकी वस्तु, भावना एवं शैली भव्य अथवा भावातिरेक-युक्त होती है।"[1] एडमण्ड गॉस ने 'ओड' की परिभाषा यों बतायी है — "यह उत्साहवर्द्धक, स्तुतिपरक, संगीतमय गीत है, जिसका एक निर्धारित उद्देश्य होता है और जो केवल एक ही भव्य वस्तु को लेकर बनायी जाती है।"[2] 'ओड' में कवि किसी अवसर विशेष की प्रमुख घटना को लेकर उसका निर्माण करता है। उसमें भावों की अन्विति अनिवार्य रूप से रहती है। कवि वस्तु विशेष का सम्बोधन करता है, वर्णनात्मकता मुख्य रूप से उसमें विद्यमान रहती है। बाह्य स्वरूप की वर्णनात्मकता उसे गीतिकाव्य का महाकाव्य बना देती है। कहने का तात्पर्य यह कि जो स्थान प्रबन्धकाव्य में महाकाव्य का है, वही ओड का गीतिकाव्य में है।"[3]

आधुनिक अंग्रेजी ओड के सर्वप्रथम रचयिता स्पेन्सर हैं जिन्होंने अपने वैवाहिक जीवन को लेकर 'ऐपीथैलेमियन' (epithalamion) नामक ओड की रचना की। वर्ड्सवर्थ की 'ओड टु ड्यूटी' (ode to duty) शैली की 'ओड टु वेस्टविण्ड' (ode-to westwind) आदि आधुनिक अंग्रेजी 'ओड' के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

हिन्दी में 'ओड' का पर्यायवाची है सम्बोधगीति। छायावाद युग में बाबू प्रसाद, पंत तथा निराला ने अंग्रेजी ढंग पर संबोधनगीतियाँ लिखीं। पन्तजी के 'छाया'

१- A rhymed (rarely unrhymed) lyric, often in the form of an address generally dignified or exalted in subject, feeling and style:
- Oxford English dictionary. Page: 563

2. "Any strain of enthusiastic and exalted lyrical verse, directed to a fixed purpose and dealing progressively with one dignified theme." - English odes: Edmond Gosse.

३- काव्यरूपों के स्रोत और उनका विकास : शकुन्तला दुबे, पृ० ३३३.

'बादल', 'शिशु', 'भावी पत्नी के प्रति', 'मित्र के प्रति', आदि गीतिकाव्य इसी स्वरूप के अन्तर्गत आते हैं ।

एलिजी (Elegy) शोकगीति

एलिजी शब्द की व्युत्पत्ति ग्रीक शब्द 'एलीजिया' से हुई है, जिसका अर्थ है दुःख, करुणा या मृत्यु पर लिखा हुआ गीत । ग्रीक साहित्य में इसका नामकरण उसके अर्थ को लेकर नहीं हुआ, लेकिन 'एलिजाइक' छन्द के आधार पर हुआ । यह छन्द षट्पदी और पंचपदी छन्द से मिलकर बना है । वस्तुतः ग्रीक काव्य क्षेत्र में करुण प्रसंग का नहीं अपितु छन्द विशेष का प्रयोग ही प्रमुख रहा है । अंग्रेजी कवियों ने अपनी 'एलिजी' में शोक की व्यंजना को ही स्थान दिया जो किसी प्रिय व्यक्ति की मृत्यु पर लिखी गयी हो । 'एलिजी वह छोटी कविता है जिसमें कवि प्रिय या महान् व्यक्ति की मृत्यु पर उत्पन्न शोक या साधारण जाति से उत्पन्न नैतिक व्यथा को प्रकट करता है ।'[१] बाद में केवल शोक-प्रधान गीति ही एलिजी नाम से अभिहित हुई । इसके लिए एलिजाइक छन्द भी अनपेक्षित ठहराया गया । 'एलिजी का गीतिकाव्य में वही स्थान है जो ट्रैजडी (Tragedy) का दृश्यकाव्य (Drama) में होता है ।'[२] अंग्रेजी में एलिजी की रचना दो रूपों में हुई । एक तो ग्रीक और लैटिन के ढंग पर लिखी ग्रामीण शोकगीति (Pastoral Elegy) कहते हैं और दूसरा रूप अपरोक्ष एलिजी (Direct Elegy) कहा जाता है । ग्रामीण शोकगीति में कवि परोक्ष रूप से अपनी दुःख की व्यंजना करता है । स्पेन्सर की 'सर फिलिप सिडनी' की मृत्यु पर लिखी हुई कविता, मिल्टन का 'लिसिडास' (Lycidas)

१- "A short poem of lamentaion or regret, called forth by the decease of a beloved or revered person or by a general sense of a pathos of morality"..... Encyclopaedia Brittannica, vol: IX. P. 252-'53.

२- काव्यरूपों के मूलस्रोत और उनका विकास : डा० शकुन्तला दूबे, पृ० ३३८.

इस प्रकार की शोकगीतियां हैं । उपरोक्त एलिजी में कवि अपने व्यक्तिगत शोक का ज्यों का त्यों आविष्कार करता है। टैनिसन का 'इन मैमोरियम' (In Memoriam), ब्रेक-ब्रेक-ब्रेक (Break-Break-Break) इस प्रकार की एलिजी के उत्कृष्ट उदाहरण हैं ।

हिन्दी में अंग्रेजी का यह काव्यरूप शोकगीति नाम से अभिहित हुआ है । आधुनिक काल में आकर हिन्दी में शोकगीतियों की रचना हुई । भारतेन्दु के नाटक 'भारत दुर्दशा' के कतिपय गीत इस प्रकार की शोकगीति हैं । निराला की 'सरोजस्मृति' तो इस काव्य रूप का अनुपम निदर्शन है ।

गीत (Song)

अंग्रेजी का सॉंग (Song) भी गीतिकाव्य का एक विख्यात रूप है, जिसमें कवि के भावावेशपूर्ण कोमल उद्गार संगीतमय पदावली में अभिव्यंजित होते हैं । हिन्दी में भी इस प्रकार साहित्यिक गीत तथा गेय पद खूब प्राप्त होते हैं । 'इडिल' (Edyll) वर्स डि सोसायटी' (verse-de-Societe) आदि रूपों का तो हिन्दी में अभाव है ।

एपिसिल (Epistle) पत्र गीति

एपिसिल ऐसी साहित्यिक कृति है जिसका स्वरूप पत्रात्मक होता है । लेखक या कवि से दूर किसी व्यक्ति को लक्ष्य कर ही उसकी रचना की जाती है ।[1] 'रोम के प्रसिद्ध कवि होरेस ने इसी पत्रात्मक पद्धति पर काव्यमय रचनाएं प्रस्तुत कीं । उन्हीं रचनाओं के आधार पर अंग्रेजी कवियों ने भी उसी शैली को अपनाया और प्रकारान्तर से यह गीति-काव्य का एक स्वरूप कहा जाने लगा ।'[2] हिन्दी में 'एपिसिल' पत्रगीति कही जाती है ।

१- Encyclopaedia Brittannica ; Vol. IX : p. 701

२- काव्यरूपों का मूलस्रोत और उनका विकास - डा० शकुन्तला दुबे, पृ० ३५३-५४.

मैथिलीशरणगुप्त जी की `पत्रावली` तथा निराला के `यमुना के प्रति पत्र` पत्रगीति के उदाहरण हैं ।

काव्यरूप की दृष्टि से गीतिकाव्य के सभी भेद खण्डकाव्य से कोसों दूर रहने वाले हैं । गीतिकाव्य के व्यंग्यगीति, सम्बोधगीति, शोकगीति आदि जो वर्णनात्मक रूप हैं वे कभी-कभी गीतिकाव्य की सीमा को लाँघकर प्रबन्धत्व को पा जाते हैं । अंग्रेजी के Ballad (वीर गीति) के समरूप काव्य हिन्दी के आदिकाल में खूब विरचित हुए, वे सब गीतिकाव्य की सीमा का उल्लंघन कर वीरभावात्मक खण्डकाव्य की कोटि को प्राप्त कर गये हैं । इसी प्रकार कतिपय शोकगीतियाँ तथा व्यंग्यगीतियाँ भी अपने गीतात्मक कलेवर में भी प्रबन्ध-काव्य की शैली को ग्रहण करती हैं । यदि ऐसी कृतियों में गीति से अधिक प्रबंध का गुण ही अधिक विद्यमान है तो वे प्रबन्ध उनके मुख्य भावों के आधार पर वीर भावात्मक, शोकात्मक तथा हास्यव्यंग्यात्मक प्रबन्ध काव्य माने जा सकते हैं । गीतिकाव्य एवं प्रबन्ध काव्य का मुख्य भेद इनमें रहता तो अवश्य है । यह तो मार्के की बात है कि गीतिगुण आजकल के प्रबन्धकाव्यों -- विशेषकर खण्डकाव्यों-की मुख्य विशेषता है ।

३- खण्डकाव्य के लक्षण

खण्डकाव्य की परिभाषाओं में यह एक बात विशेष लक्षित होती है कि इसमें जीवन के एक ही पक्ष का चित्रण होता है । प्रबन्धकाव्य के अन्तर्गत महाकाव्य एवं खण्डकाव्य का स्थान है । प्रबन्ध काव्य में जीवन का अन्य-सापेक्ष्य विस्तृत वर्णन होता है । जीवन का यह अन्य-सापेक्ष्य वर्णन जीवन-दृष्टिपथ के अनुसार एक ओर महाकाव्य को जन्म देता है और दूसरी ओर खण्डकाव्य को । जब जीवन का विस्तृत दृष्टिपथ से निरीक्षण और वर्णन होता है तब महाकाव्य जन्म लेता है और जहाँ जीवन का सीमित दृष्टिपथ से विश्लेषण-वर्णन होता है वहाँ खण्डकाव्य की सृष्टि होती है । इसी काव्य रूप को तो रुद्रट ने लघुकाव्य माना है ।

१- अनामिका : निराला, पृ० ११४.

तत्व काव्यों के आधार पर ही तो लक्षणों का निर्धारण होता है। आधुनिक काल के तत्वकाव्य तो पुराने तत्वकाव्यों से रूप एवं भाव की दृष्टि से बदले हुए हैं। इस बदलते परिवेश में उसके लक्षणों में भी थोड़ा-बहुत परिवर्तन हो जाना स्वाभाविक है। काव्यगत मूल लक्षण तो सदैव अक्षुण्ण रहेगा ही। वही मूल लक्षण अन्धकार में दीपक की ज्योति की भाँति हमारा दिग्दर्शन करता रहता है। यह बात द्रष्टव्य है कि कविता या नयी कविता के युग में नये प्रयोग के जो खण्डकाव्य रचे गये हैं, उन पर प्राचीन आचार्यों के लक्षण अंशतः ही ठहरते हैं। रुद्रट ने बताया है कि उक्त काव्य में चतुर्वर्ग फल में से एक उद्देश्य रूप में अपनाया जाता है तथा अनेक रस की अंशमात्र रूप में या एक रस की समग्र रूप में निष्पत्ति होती है। आधुनिक काव्य में न तो चतुर्वर्ग फल-वाले सिद्धांत की उतनी मान्यता है और न रस की ही। आजकल चरित्रांकन की महत्ता बढ़ गयी है, जीवन का मूल्यांकन भी नवीन दृष्टिकोण से होने लगा है। आचार्य विश्वनाथ के 'काव्य के एकदेश का अनुसरण करने वाला' सिद्धान्त भी उतना स्पष्ट तो नहीं। काव्य के एक अंश का अनुसरण करके जो भी काव्य रचा जाय, वह तो मात्र इस लक्षण के कारण खण्डकाव्य नहीं माना जायगा। खण्डजीवन का चित्रण जब विशाल दृष्टि-पथ से किया जाता है तथा यदि उसमें महत्ता है और उसकी शैली भी गरिमामयी है तो वह महाकाव्य की कोटि तक पहुँच जाता है। यही नहीं महाकाव्य का एक अंश खण्डकाव्य भी नहीं कहा जायगा।

यह स्पष्ट है कि खण्डकाव्य के लक्षण आधुनिक खण्डकाव्य पर पूर्णतया खरे नहीं उतरते। इस दशा में आधुनिक खण्डकाव्य साहित्य को भी दृष्टि में रखकर उसका लक्षण निर्धारण आवश्यक हो जाता है। आधुनिक काल से लेकर आज तक खड़ी बोली हिन्दी खण्डकाव्य धारा निरंतर प्रवाहित हो रही है। द्विवेदी युग से लेकर, छायावाद एवं छायावादोत्तर काल के खण्डकाव्यों में कालोचित, विभिन्न काव्य प्रवृत्तियाँ दर्शित होती हैं। द्विवेदी युगीन इतिवृत्तात्मक खण्डकाव्यों के रूप क्रमशः परिवर्तित होते गये। इतिवृत्त की प्रधानता कम होती गयी और इतिवृत्तात्मकता के स्थान पर क्षीण कथासूत्रों

पर काव्य निर्माण होता गया । पौराणिक कथावस्तुएं आधार बनीं, पर उनकी युगानुकूल मनोवैज्ञानिक एवं तर्कसंगत नवीन व्याख्यायें हुईं । पात्रों के स्थूल चरित्र-चित्रण के स्थान पर मनोवैज्ञानिक चित्रण शुरू हो गया । मुक्तछन्द-रूप के उदय से काव्य का बाह्य रूप भी बदल गया तो काव्य बाह्य एवं आंतरिक दोनों रूपों में अभिनव हो गया । लेकिन प्राचीनता एवं शास्त्रत्व के पक्षपाती जो प्रसिद्ध कवि हुए उन्होंने छन्दोबद्ध एवं लक्षण संयुक्त खण्डकाव्यों की रचना की । आधुनिक युग में वे काव्य प्राचीन-से लगते हैं । नवकविता का युग आ गया तो गीतों की स्फुटता में प्रबन्धत्व बिखरता गया । युगप्रवृत्ति ही ऐसी रही कि विषय से अधिक विषयी ही प्रमुख हो गया । नवयुग में आकर यह काव्यरूप जो और भी सज गया और बदल गया, उसकी विशेषताओं को भी ध्यान में रखने पर खण्डकाव्य के निम्नलिखित लक्षण ठहरते हैं —

१- यह एक प्रबन्धकाव्य है, जिसमें जीवन के किसी मार्मिक पक्ष का चित्रण सीमित दृष्टिपथ से होता है ।

२- काव्य कलेवर अपेक्षाकृत लघु रहता है ।

३- कथा का संगठन - चाहे कथावस्तु कमज़ोर हो - रहता अवश्य है ।

४- काव्य अपने आप में सम्पूर्ण रहता है ।

५- चरित्रचित्रण, वातावरण-चित्रण आदि की योजना रहती है ।

६- सर्ग-विभाजन अनिवार्य नहीं ।

७- छन्दोबद्धता की आवश्यकता नहीं, मुक्त छन्द में भी काव्य रचना हो सकती है ।

८- कार्यैक्य की सिद्धि काव्य का लक्ष्य रहता है ।

आधुनिक हिन्दी खण्डकाव्य पर एक सरसरी निगाह, यह स्पष्ट करने में समर्थ है कि खण्डकाव्य के मूल लक्षण इस विचार-परम्परा में भी पूर्ण रूपसे विद्यमान हैं ।

५- खण्डकाव्य का वर्गीकरण

खण्डकाव्य के स्वरूप निर्धारण के उपरान्त खण्डकाव्य के वर्गीकरण के महत्वपूर्ण कार्य का परिचिंतन वांछनीय है । संस्कृत काव्यशास्त्र में खण्डकाव्य का विवेचन-विश्लेषण -- वर्गीकरण नहीं हुआ है । हिन्दी के आचार्यों का भी ध्यान समुचित रूप से इस ओर नहीं गया है । लेकिन कतिपय आधुनिक आचार्यों ने खण्डकाव्य के वर्गीकरण को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है ।

खण्डकाव्य के वर्गीकरण करने वाले सर्वप्रथम व्यक्ति डा० भगीरथ मिश्र हैं । अपने प्रख्यात ग्रन्थ 'काव्यशास्त्र' में आपने छन्दयोजना के आधार पर खण्डकाव्य के दो वर्ग किये -- एकार्थ और अनेकार्थ काव्य । जिस खण्डकाव्य में आद्यंत एक ही छन्द का प्रयोग होता है वह एकार्थ-काव्य तथा जिसमें अनेक छन्दों का प्रयोग होता है वह अनेकार्थ-काव्य है । "प्रबन्ध-काव्य का दूसरा भेद खण्डकाव्य या खण्डप्रबन्ध है । .... खण्डकाव्य के दो भेद किये जा सकते हैं -- एक संघात अथवा एकार्थ खंडकाव्य जिसमें कि एक प्रकार के छंद में ही एक घटना या दृश्य का वर्णन किया जा सकता है और दूसरा अनेकार्थ खण्डकाव्य, जिसमें अनेक प्रकार के छन्दों में विविध भावों के साथ जीवन के एक अंश का चित्रण होता है ।"[१]

प्रस्तुत काव्य रूप के वर्गीकरण के लिए आचार्य ने जो आधार स्वीकार किया वह निश्चय ही महत्वपूर्ण है । छन्दों के आधार पर - एकछन्दात्मक तथा बहुछन्दात्मक वर्गीकरण सचमुच महत्व का है । किन्तु काव्य के वर्गीकृत रूप के लिए आपने जो नाम दिया है, उसकी सार्थकता तथा सत्यता संदिग्ध है । एकार्थ काव्य तथा अनेकार्थ काव्य संज्ञा से वास्तविक अर्थ बोध कम ही होता है ।

डा० शकुन्तला दुबे ने खण्डकाव्य के दो प्रमुख प्रकार किये हैं -- एक तो लोक से उद्भूत लोकरंजन के लक्ष्य से निर्मित और दूसरा देशी-विदेशी परम्परा से उद्भूत साहित्य-मर्मज्ञ

१- काव्यशास्त्र - भगीरथ मिश्र, द्वि०सं०(१९५३), पृ० ५७.

सहृदय पाठक को तन्मयीभूत करके रचे हुए खण्डकाव्य । प्रथम प्रकार के खण्डकाव्यों का पुनः लोकदृष्टि-प्रधान तथा व्यक्तित्व-प्रधान भेद भी किया गया है । लोकदृष्टि-प्रधान वर्ग में कुछ वीर-भावात्मक व कुछ प्रेमप्रधान खण्डकाव्य विभाग भी हैं । व्यक्तित्वप्रधान खण्डकाव्य में भी भक्तिप्रधान, प्रेमप्रधान आदि भेद हैं । इसके भी अवान्तर विभागों का निर्धारण आपने किया है ।[1] पश्चिमी या विदेशी काव्यपरम्परा से उद्भूत साहित्य मर्मज्ञ के लिए निर्मित खण्ड-काव्यों के आपने दो वर्ग किये हैं । एक पुरानी शैली के तथा दूसरा नवीन शैली के खण्डकाव्य । नवीन शैली के खण्डकाव्य पुनः दो भागों में विभक्त हैं -- विस्तृत वर्णनात्मक तथा संक्षिप्त प्रभावात्मक शैली के खण्डकाव्य । संक्षिप्त प्रभावात्मक शैली के खण्डकाव्यों को आपने सर्गबद्ध तथा सर्गविहीन दो भागों में बाँटा है । इसके भी अवान्तर विभागों का आपने संकेत दिया है ।[2]

उपर्युक्त वर्गीकरण का सूक्ष्मावलोकन करने पर ज्ञात होगा कि दुबे जी ने खण्डकाव्य रूप का वर्गीकरण नहीं किया है, लेकिन खण्डकाव्य साहित्य के उपलब्ध रूपों का ही अन्तः प्रेरणा, उद्देश्य आदि की दृष्टि से वर्गीकरण करने का प्रयास किया है । खण्डकाव्य के सैद्धान्तिक वर्गीकरण के लिए उसके शास्त्रीय लक्षणों के आधार पर चिंतन मनन परम आवश्यक है ।

डा० निर्मला जैन ने 'आधुनिक हिन्दी में रूपकियाएँ' में खण्डकाव्य के दो भेद किये हैं -- महाकाव्यात्मक खण्डकाव्य तथा लघुप्रबन्धात्मक खण्डकाव्य । यह वर्गीकरण भी महज काव्यकलेवर पर आधारित है । यह भी सैद्धान्तिक दृष्टि से सफल प्रतीत नहीं होता ।

डा० गोपालदत्त सारस्वत[3] ने आधुनिक खण्डकाव्यों की परम्परा के विभाजन के चार मानदण्ड निर्धारित किये -- चरित नायक, सानुबन्ध कथा, रस एवं वस्तुवर्णन । स्पष्ट है कि वर्गीकरण मात्र आधुनिक खण्डकाव्य परम्परा का है । खण्डकाव्य रूप का सैद्धान्तिक वर्गीकरण नहीं । किन्तु खण्डकाव्य के ये चारों तत्व -- पात्र, कथा, रस एवं वस्तुवर्णन काव्य

१-२. काव्यरूपों के मूल स्रोत और उनका विकास - डा० अनुपलता दुबे, पृ० १५८.

३- आधुनिक हिन्दी काव्य में परम्परा तथा प्रयोग : डा० गोपालदत्त सारस्वत, पृ० ३२८ .

के वर्गीकरण का आधार बन सकते हैं ।

सचमुच कथावस्तु, छन्द, सर्ग, आदि ऐसे मानदण्ड हैं जिन पर खण्डकाव्य नाम्नी काव्यविधा का वर्गीकरण हो सकता है । यथा --

कथावस्तु के आधार पर : ऐतिहासिक, पौराणिक आदि ।

छन्द के आधार पर : एकछन्दात्मक, बहुछन्दात्मक,गीतात्मक,मुक्तछन्दात्मक आदि ।

सर्ग के आधार पर : सर्गयुक्त, सर्गरहित आदि ।

इसका विस्तृत विश्लेषण आगे किया जायगा ।

५- खण्डकाव्य परम्परा का वर्गीकरण

खण्डकाव्य की साहित्य परम्परा का विभाजन कई प्रकार से हो सकता है । सर्वप्रथम ऐतिहासिक वर्गीकरण का परिचिंतन करें ।

अन्यान्य काव्यरूपों की भाँति खण्डकाव्य का भी सर्वांगीण विकास आधुनिक काल में ही हुआ है । आधुनिक काल के पूर्व की खण्डकाव्य धारा उतनी प्रबल नहीं रही । आधुनिक काल के बदलते परिवेश में जो अभिनव काव्यरूप, भाव एवं रूप में नवता लेकर आये, उनमें खण्डकाव्य का प्रमुखतम स्थान है । आधुनिक काल की प्रवृत्तियों ने विभिन्न प्रकार के खण्डकाव्यों की रचना की प्रेरणा दी । फिर खण्डकाव्य की धारा निरन्तर चलती रही । `अकविता` या `नयी कविता` के इस युग में भी नवीन भाव एवं रूप के खण्डकाव्य जन्म लेते ही रहते हैं । अध्ययन की सुविधा हेतु आधुनिक-काल के विशेष कर सन् १९०० से १९७० तक के -- खण्डकाव्य की धारा का विभाजन आवश्यक है । इसके लिए आधुनिक काव्यधारा की विकास-परम्परा -- जिसके अन्तर्गत ही खण्डकाव्य की धारा भी सतत प्रवाहित होती रही-- पर एक विहंगम दृष्टि उपयोगी है ।

आधुनिक हिन्दी काव्योत्थान का प्रथम चरण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र से शुरू होता है । भारतेन्दु और उनके मण्डल के कवियों ने भावक्षेत्र में क्रांति के द्वारा काव्यक्षेत्र

में युगांतर किया था । भारतेन्दु काल सन् १८५० से १९०० तक माना जाता है । अपने प्रभाव-शाली व्यक्तित्व के कारण वे तत्कालीन साहित्य के निर्माता हो गये और उनके नाम के आधार पर युग का नामकरण भी हो गया । प्राचीन से नवीन के संक्रमण के युग में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र भारतीय जन मानस की अभिनव आशा-आकांक्षा एवं राष्ट्रीयता के प्रतीक थे, भारतीय नवोत्थान के वे अग्रदूत थे । मध्ययुगीन पौराणिक वातावरण से जीवन और साहित्य को बाहर निकाल कर उन्हें आधुनिक रूप देने का महान् कार्य आपसे संपन्न हुआ । यों साहित्य जगत में क्रांति उपस्थित करने वाले भारतेन्दु जी ही हुए हैं । डा० सुधीन्द्र ने परिवर्तन के इस चरण को 'क्रांति का प्रथम चरण' कहा है -- 'भारतेन्दु में रीतिकालीन भाषा-परम्परा थी, उनमें भक्तिकालीन भाव परम्परा का भी नवोत्थान था, परन्तु उसके साथ ही वे नवयुग की कविता के अग्रदूत भी थे । वह नवयुग कविता में 'क्रांति-युग' है ।'[1]

तब तक हिन्दी कविता रचना मुख्यतः ब्रजभाषा में होती थी । मुख्य रूप से ब्रजभाषा में तथा गौण रूप से खड़ी बोली में जो काव्य निर्माण हो रहे थे, भारतीय जीवन को चित्रित करने वाले अवश्य थे । प्रारंभ में परम्परानुकूल कविता ही बनी रही, पर कविता का वह पुराना रूप हटने लगा एवं कविता की नयी धारा भारतेन्दु से प्रारंभ हो गयी ।

निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल ।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को सूल ।।

-- की घोषणा करके हिन्दी भाषा एवं साहित्य की प्रगति के लिए सतत प्रयत्नशील भारतेन्दु सचमुच हिन्दी भारती के इन्दु थे । आदर्श से अधिक यथार्थ की ओर भारतेन्दु युगीन कविता उन्मुख रही । तत्कालीन परिस्थितियों से यह पूर्णतया प्रभावित है । नवशिक्षित कवियों का हृदय देश की दुर्दशा, पाश्चात्य सभ्यता का अन्धानुकरण, ब्रिटिश शासकों की पक्षपात नीति आदि देखकर क्षुभित हो उठा, उनका आक्रोश सर्वत्र मुखरित हुआ । यही कारण है कि तत्कालीन कविता में लौकिक देश भक्ति सामाजिक और धार्मिक पुनर्गठन, मातृभाषा का उद्धार, स्वतंत्रता आदि का स्वर बुलन्द हुआ । उसमें राजनीतिक चेतना है और अंग्रेजी

१- हिन्दी कविता में युगांतर - डा० सुधीन्द्र - १९५७, पृ० ३९.

साम्राज्यवादी नीति, आर्थिक शोषण, काले-गोरे का भेद-भाव आदि का विरोध है। भारतीय पीड़ा के विरुद्ध उसमें स्वर है। शासन-सुधारों एवं जनतंत्र शासन प्रणाली की मांग भी उसमें है।

भारतेन्दु की मृत्यु के उपरान्त खड़ी बोली काव्यक्षेत्र में पदार्पण करने लगी। हिन्दी कविता में जन्मोत्थान का प्रादुर्भाव इस काल में हुआ। तब से डा० सुधीन्द्र के अनुसार कविता में क्रांति का दूसरा चरण शुरू होता है। यह दूसरा चरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी -- जो इस काल के साहित्य के अग्रदूत रहे -- के नाम पर माना जाता है। यह काल सन् १९०३ से १९२५ तक माना जाता है। हिन्दी कविता का नव-जन्म वास्तव में बीसवीं सदी से ही हुआ। ब्रजभाषा से राष्ट्रभाषा खड़ी बोली हिन्दी कविता का आगमन सचमुच युगांतरकारी घटना है। द्विवेदी जी सच्चे अर्थ में आधुनिकता के अग्रदूत हैं। उन्हीं का युग -- द्विवेदी युग -- आधुनिक हिन्दी (खड़ी बोली) काव्य का प्रारंभिक काल है।

'सरस्वती' पत्रिका का संपादन करके आपने हिन्दी सरस्वती की उपासना की। आपकी सरस्वती हिन्दी कविता की अभिनव प्रगति की वास्तविक प्रतिनिधि थी। "नये विचार और नयी भाषा", नया शरीर और नयी पोशाक दोनों ही नयी हिन्दी को द्विवेदी जी की देन है। इस कारण वे नयी हिन्दी के प्रथम और युगप्रवर्तक आचार्य माने जाते हैं।[१]

आधुनिक कविता ने भारतेन्दु युग से द्विवेदी युग तक आते-आते करवटें ही बदली थीं। तत्कालीन काव्य की दशा का वर्णन करते हुए आपने जून, १९०० ई० की 'सरस्वती' में 'हे कविते !' शीर्षक एक कविता का प्रकाशन किया --

'सुरम्य रूपे रस-राशि-रंजिते ! विचित्र --
वर्णाभरणे कहाँ गई ?
अलौकिकानन्द विधायिनी महा, कवीन्द्र कान्ते !
कविते ! अहो कहाँ ?'

१- नन्ददुलारे वाजपेयी - आधुनिक साहित्य, पृ० ९७.

अब तक प्रबन्धकाव्यों एवं गीतकाव्यों का एक प्रकार से अभाव रहा । बीसवीं शती के प्रथम दो दशकों में महाकाव्य, खण्डकाव्य, आख्यानक काव्य, गीतकाव्य आदि से खड़ी बोली का काव्यभण्डार भर गया । द्विवेदी युग की अनेकरूपता के बारे में श्री कृष्णलाल के शब्द उल्लेखनीय हैं -- "पच्चीस वर्षों में ही एक अद्भुत परिवर्तन हो गया । मुक्तकों के धनखण्ड के स्थान पर महाकाव्य, खण्डकाव्य, आख्यानककाव्य, प्रेमाख्यानक काव्य, प्रबन्ध काव्य, गीतिकाव्य और गीतों से सुसज्जित काव्योपवन का निर्माण होने लगा ।"[१]

द्विवेदी युगीन स्थूल इतिवृत्तात्मकता से विमुख कविगणों ने हिन्दी कविता को पुनः मोड़ने का प्रयत्न किया । फलस्वरूप काव्यक्षेत्र में पुनः परिवर्तन उपस्थित हुआ । यही परिवर्तन काल विभिन्न नामों से अभिहित हुआ है । द्विवेदी युग के नीरस, उपदेशात्मक, स्थूल आदर्शवादी काव्यधारा के बीच से एक अभिनव काव्यधारा प्रवाहित हुई । यह अभिनव काव्यधारा अंग्रेजी के रोमान्टिक कवियों तथा बंगला के कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की काव्य-धारा से प्रभावित थी । श्रीधर पाठक ने जिस स्वच्छन्दतावादी आन्दोलन को शुरू किया, उसकी हिन्दी क्षेत्र में छायावादी युग में आकर पुनः प्रतिष्ठा हुई ।

छायावाद काल की सीमा विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न रीति से निर्धारित की है । शुक्ल जी ने मैथिलीशरण गुप्त जी तथा मुकुटधर पाण्डेय को छायावाद के प्रवर्तक मानकर छायावाद का उदय काल सन् १९०५ के लगभग माना है । -- "हिन्दी कविता की नयी धारा (छायावाद) का प्रवर्तक इन्हीं को -- विशेषतः मैथिलीशरणगुप्त और मुकुटधर पाण्डेय को समझना चाहिए ।"[२] इलाचन्द्र जोशी के अनुसार -- "प्रसाद जी अविवादास्पद रूप से हिन्दी के सर्वप्रथम छायावादी कवि ठहरते हैं और वे छायावाद का प्रारंभ काल सन् १९१३-१४ मानते हैं ।

१- आधुनिक साहित्य - श्री कृष्णलाल

२- हिन्दी साहित्य का इतिहास : शुक्ल जी

नन्ददुलारे वाजपेयी जी सुमित्रानंदन पंत जी को छायावाद के अगुए की ख्याति देते हुए इस काल का प्रारंभ सन् १९२० से मानते हैं । --"साहित्यिक दृष्टि से छायावादी काव्यधारा का वास्तविक अभ्युदय सन् १९२० के पूर्व-पश्चात् सुमित्रानन्दन पन्त की 'उच्छ्वास' नाम की काव्यपुस्तिका के साथ माना जा सकता है ।"[१] निश्चय ही काव्यप्रवृत्तियाँ किसी कालसीमा के भीतर सिमट कर नहीं रहतीं, यों किसी काव्यप्रवृत्ति के लिए कालसीमा निर्धारित करना शायद ही उचित हो, किन्तु अध्ययन की सुविधा के लिए यह वांछनीय ही नहीं अपितु आवश्यक भी है । एक अर्थ में छायावाद काल आधुनिक हिन्दी काव्योत्थान का तृतीय चरण है । सन् १९२० तक द्विवेदी-युगीन काव्यधारा लुप्त होती है और तभी से तीसरी धारा वृद्धि पाती है । यों तो रहस्यवाद प्रगतिवाद जैसे वादों को पार कर यह कविता 'नयी कविता' या प्रयोगवादी कविता नाम्नी धारा तक अब (लगभग १९४० ई०) पहुँच जाती है, तब तक के समय को हम इसके अन्तर्गत रख सकते हैं । 'हिन्दी साहित्यकोश' भी इस बात का समर्थन करता है --"छायावाद युग को दो कालों में विभाजित किया जा सकता है । सन् १९१८ से १९३० तक का काल उसका पूर्वार्द्ध है, जिसमें छायावाद विकासोन्मुख था और उसमें व्यक्तिस्वातंत्र्य और विद्रोह की प्रवृत्ति अत्यन्त शक्तिशाली, तीव्र भावात्मकी और संघटित थी । सन् १९३० से १९४२ तक का काल उसका उत्तरार्द्ध है जिसमें छायावाद की शक्ति बिखरने लगी और वह भावों के स्वप्नलोक को छोड़कर यथार्थ की कठोर भूमि पर उतरना दिखायी पड़ा ।"[२]

यों तो नवीन पद्य के आन्दोलन के प्रारंभ (१९२०) से नयी कविता के प्रारंभिक काल (सन् १९४२ के आसपास) तक एक कालखण्ड के अन्तर्गत रखा जा सकता है । संयोगवश सन् १९४७ ई० में भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता भी प्राप्त होती है ।

छायावाद के चतुष्टय -- प्रसाद, पंत, निराला एवं महादेवी वर्मा ने अपनी अनूठी काव्यमणियों से छायावाद का भण्डार भर दिया एवं छायावाद के गौरव को बढ़ा

---

१ - आधुनिक साहित्य - नन्ददुलारे वाजपेयी.

२- हिन्दी साहित्यकोश - धीरेन्द्र वर्मा - पृ० ३२६.

किया । वस्तुत रामविलास शर्मा ने उचित ही कहा है -- छायावाद का इतिहास चार प्रमुख व्यक्तियों से निर्मित होता है । प्रसाद उसका शृंगार, पंत उसकी कोमलता, निराला उसका पौरुष एवं महादेवी उसकी दिव्यता है ।¹ छायावाद युग में असंख्य श्रेष्ठ प्रबन्ध (महाकाव्य एवं खण्डकाव्यों) काव्यों का निर्माण हुआ, जो उल्लेखनीय है ।

छायावादोत्तर काल का हिन्दी काव्य स्वतंत्र भारत का काव्य है । यही काल प्रयोगवाद या नयी कविता काल नाम से अभिहित हुआ है । अज्ञेय के 'तारसप्तक' के प्रकाशन के साथ (सन् १९४३) यह काल शुरू होता है । मुक्तछन्द एवं फुटकर कविताओं की रचना इस काल की प्रमुख विशेषता है । इस युग में भी एक विशेषता यह परिलक्षित होती है कि अब भी प्रचुर मात्रा में प्रबन्धकाव्यों -- महाकाव्य एवं खण्डकाव्य -- का सृजन हुआ ।

आधुनिक हिन्दी काव्य धारा के ऐतिहासिक काल-विभाजन के उपरान्त आधुनिक खण्डकाव्य-परम्परा के काल-विभाजन का महत्वपूर्ण प्रश्न सम्मुख उपस्थित होता है । हिन्दी कविता के क्षेत्र में छायावाद काल एक मुख्य मील स्तंभ है । काव्यधारा के किसी भी अंग के कालविभाजन के लिए छायावाद काल केन्द्रबिन्दु बन सकता है । उसे केन्द्र बिन्दु बनाकर उसके पूर्व एवं उसके बाद के काल को मापने का प्रयत्न करना अनुचित नहीं होगा । छायावाद पूर्व काल, (१९००-२०) छायावाद काल (१०२०-४०) एवं छायावादोत्तर काल (१९४०—)¹ सन् १९०० से १९७० तक का काल ही हमारे अनुशीलन का है । छायावाद पूर्वकाल के अन्तर्गत द्विवेदी युग आ जाता है और उसके अनन्तर छायावादी युग । उसके बाद प्रगतिवाद और प्रयोगवाद के परिप्रेक्ष्य में जो नयी कविता जन्म लेती है वही छायावादोत्तर काल में समाविष्ट है ।

६- काल विभाजन की सार्थकता

यह तो हुआ आधुनिक हिन्दी खण्डकाव्य परम्परा का ऐतिहासिक काल विभाजन । ऐतिहासिक दृष्टि से खड़ी बोली हिन्दी काव्य का विकास आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के काल से ही होता है । तब तो उस काल को प्रथम युग मानने में कोई आपत्ति नहीं । वस्तुत नवीन खण्डकाव्यों के उद्भव का भी यही समय है । द्विवेदीयुगीन इतिवृत्ता-

त्मक परम्परा के खण्डकाव्य प्रचुर मात्रा में इसी समय विरचित हुए । छायावादी स्वच्छंदता-वादी कवियों का आगमन काव्यक्षेत्र में युगांतर स्थापित करता है । और यहां से खण्ड-काव्य भी रूप एवं भाव की दृष्टि से परिवर्तित हुए । यों छायावादी युग खण्डकाव्य-विकास के इतिहास में भी एक नया युग आरम्भ करता है । यहां से दूसरे युग का श्रीगणेश होता है । छायावादी मान्यताओं से युक्त काव्य कुछ समय तक काव्य-जगत् में प्रचलित रहे । छायावादी विशेषताओं से अभिमण्डित उन खण्डकाव्यों को छायावादी खण्डकाव्य अभिहित करने में किमता शायद ही है । काव्यक्षेत्र में छायावाद का तूफान जब समाप्त हुआ तब नयी कविता का युग आ गया । इस समय रचित खण्डकाव्यों को छायावादोत्तर खण्डकाव्य कहा जा सकता है ।

छायावादपूर्व काल, छायावाद काल तथा छायावादोत्तर काल यह विभाजन जो हुआ है, मात्र ऐतिहासिक नहीं है । काव्यप्रवृत्ति -- जो काल विभाजन के मूल में काम करती है -- भी अनदेखी तो नहीं । छायावादपूर्व काल तो मुख्यतया द्विवेदी युग रहा है और द्विवेदी-युगीन इतिवृत्तात्मकता, राष्ट्रीयता, देशप्रेम आदि ही तत्कालीन मूलप्रवृत्तियां रहीं । फिर रोमान्टिक भावना काव्य की मुख्य प्रवृत्ति हो जाती है । उसके अनन्तर तो नयी कविता या अकविता का समय है ।

वस्तुतः कवि लकीर के फकीर रहते नहीं । कहा भी गया है --

"लीक छोड़ तीनों चले शायर, शेर, सपूत ।"

कवि भी परम्परा पर नहीं चलते । अतः छायावाद काल में भी इतिवृत्तात्मक काव्यपरम्परा में विरचित काव्य पा सकते हैं, उसके उपरांत भी। इन्हें तो "नवीन प्रयोग के खण्डकाव्य" मान सकते हैं । "नयी कविता" के इस युग में भी ऐसे काव्यों का सृजन हो रहा है जो इतिवृत्तात्मक द्विवेदीयुगीन परम्परा के खण्डकाव्यों की याद दिलाते हैं ।

"हिन्दी साहित्य के इतिहास" से काव्य विकास परम्परा-विभाजन के अनुकूल ही खण्डकाव्य विकास की परम्परा का भी काल विभाजन एवं सीमा निर्धारण हुआ है ।

अध्ययन की सुविधा भी विभाजन के मूल में काम करती रहती है । यों तो छायावाद पूर्व युग की सीमा सन् १९०० से १९२० ई० तक, छायावाद युग की सन् १९२० से १९४० ई० तक तथा छायावादोत्तर युग की सीमा सन् १९४० से अब तक विशेषकर १९७० ई० तक (जहां तक प्रस्तुत काव्याध्ययन की सीमा है) रखी गयी है । अन्य प्रामाणिक इतिहास ग्रन्थ भी इसके साक्षी हैं, यद्यपि कतिपय साहित्येतिहासकारों की तिथिमान्यता में अन्तर है । छायावाद काल को हिन्दी खण्डकाव्य-विकास का मीलस्तंभ मानकर वहां से आगे-पीछे काव्य गति को नापने का प्रयास ही यहां किया गया है ।

ऐतिहासिक वर्गीकरण के अतिरिक्त अन्य विभाजन खण्डकाव्य की विकास-परम्परा के अध्ययन के उपरान्त ही सुव्यवस्थित एवं सर्वांगपूर्ण हो पायगा । जैसे : काव्य वस्तुओं के आधार पर वर्गीकरण --

१- कथावस्तु के आधार पर -- कथाप्रधान तथा विचार या भावप्रधान । इसके भी अनेक भेद हैं जैसे --

(क) प्रत्यक्ष एवं काल्पनिक । (ख) ऐतिहासिक, पौराणिक, सामाजिक, काल्पनिक, मनोवैज्ञानिक आदि । (ग) वर्णनप्रधान, विचारप्रधान, नाटकीय (दृश्यप्रधान), हास्यात्मक आदि ।

(इस विभाजन में लिखने की शैली की प्रमुखता पर ज़ोर है ।)

२- रस के अनुसार -- (क) एक रस समग्र रूप में, अनेक रस समग्र रूप में ।
(ख) शृंगार रस प्रधान, वीर रस प्रधान, करुण रस प्रधान आदि ।

३- सर्ग के अनुसार -- (क) सर्गबद्ध (ख) सर्गमुक्त, (ग) जिसमें सर्गीकरण न हो पर वर्णन-संकेत हो, (घ) जिसमें सर्गबद्धता एवं वर्णन संकेत दोनों हों ।

(सर्ग के लिए अध्याय, खण्ड आदि अन्य नाम भी प्रचलित होते हैं)

४- छन्द के अनुसार -- एक छन्दात्मक, बहुछन्दात्मक, गीतात्मक, मुक्तछन्दात्मक ।

प्रबन्ध खण्डकाव्य अपने में एक निराला काव्यरूप है । अपनी विशिष्ट विशेषता के कारण यह काव्य रूप अन्य काव्यरूपों के बीच अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखता है ।

जीवन के एक ही मार्मिक प्रसंग को महत्वपूर्ण स्थान देकर, आदि से अंत तक प्रबन्ध तत्व का पालन करते हुए रस, छन्द, आदि काव्यतत्वों के समन्वित सामंजस्य से सृजन पाने वाला यह काव्यरूप अपने स्वरूप में नितांत पृथक् अस्तित्व रखने वाला है । अखण्ड काव्यानन्द देने में समर्थ यह काव्य रूप-खण्डकाव्य-विशेष महत्व का है जो लोकप्रिय भी है । अपने लघुरूप के अन्तर भी विभिन्नता एवं विविधता की बहुरंगी छटा दिखलाने वाली इस काव्यविधा का आश्चर्यजनक महत्व है । यह काव्यरूप अपने आप विविध तत्वों को ग्रहण कर विविध रूपों में निखरी कि इसके अनेक भेद भी हुए । ऐतिहासिक व विभिन्न काव्यतत्वों के आधार पर प्रस्तुत काव्यरूप के जितने भेद मिलते हैं वस्तुतः प्रस्तुत काव्यरूप के विकास के ही द्योतक हैं ।